महर्षि याज्ञवल्क्य और राजा जनक :
बृहदारण्यक उपनिषद् से एक कथा

एक बार की बात है, एक अग्निहोत्र यज्ञ के दौरान, विदेहराज जनक और महर्षि याज्ञवल्क्य के बीच वार्तालाप चल रहा था। ऋषि याज्ञवल्क्य ने राजा जनक को एक वरदान दिया। वरदान मिलने पर राजा जनक ने ऋषि याज्ञवल्क्य से अनुरोध किया कि वे उनसे कोई भी प्रश्न पूछ सकें और याज्ञवल्क्य जी ने उनके इस अनुरोध को स्वीकार किया। अतः राजा जनक ने अपना प्रश्न पूछते हुए कहा :

“हे ऋषि याज्ञवल्क्य, वह क्या है जो मानव के लिए प्रकाश के रूप में कार्य करता है?”

“सूर्य, महाराज,” उन्होंने उत्तर दिया। “सूर्यरूपी प्रकाश के कारण मानव बैठता है, इधर-उधर क्षेत्र या अरण्य में जाता है, वहाँ अपना कार्य करता है और पुनः लौट आता है।”

“ऐसा ही है, हे याज्ञवल्क्य।”

“परन्तु ऋषिवर, जब सूर्यास्त हो जाता है, तब वह क्या है जो मानव के लिए प्रकाश के रूप में कार्य करता है?”

“तब चन्द्रमा उसके लिए प्रकाश के रूप में कार्य करता है,” उन्होंने कहा, “क्योंकि चन्द्रमारूपी प्रकाश के कारण मानव बैठता है, इधर-उधर जाता है, अपना कार्य करता है और पुनः लौट आता है।”

“ऐसा ही है, हे याज्ञवल्क्य।”

“परन्तु ऋषिवर, जब सूर्यास्त हो चुका होता है, चन्द्रमा अस्त हो चुका होता है, तब वह क्या है जो मानव के लिए प्रकाश के रूप में कार्य करता है?”

“तब अग्नि उसके लिए प्रकाश के रूप में कार्य करती है,” उन्होंने कहा, “क्योंकि अग्निरूपी प्रकाश के कारण मानव बैठता है, इधर-उधर जाता है, अपना कार्य करता है और पुनः लौट आता है।”

“ऐसा ही है, हे याज्ञवल्क्य।”

“परन्तु जब सूर्यास्त हो चुका होता है, चन्द्रमा अस्त हो चुका होता है, अग्नि शान्त हो चुकी होती है, तब वह क्या है जो मानव के लिए प्रकाश के रूप में कार्य करता है?”

“तब वाणी उसके लिए प्रकाश के रूप में कार्य करती है,” महर्षि ने कहा, “क्योंकि वाणीरूपी प्रकाश के कारण वह मानव बैठता है, इधर-उधर जाता है, अपना कार्य करता है और पुनः लौट आता है। अतः, हे राजन्, जब मानव को अपने हाथ तक दिखाई नहीं देते, परन्तु उस समय जब किसी शब्द का उच्चारण होता है, तब उसे सुनकर मानव सीधा उसीकी ओर चला जाता है।”

“ऐसा ही है, हे याज्ञवल्क्य।”

“परन्तु जब सूर्यास्त हो चुका होता है, चन्द्रमा अस्त हो चुका होता है, अग्नि शान्त हो चुकी होती है और वाणी मौन हो चुकी होती है, तब वह क्या है जो मानव के लिए प्रकाश के रूप में कार्य करता है?”

“तब आत्मा उसके लिए प्रकाश के रूप में कार्य करती है,” उन्होंने कहा, “क्योंकि आत्मप्रकाश के कारण मानव बैठता है, इधर-उधर जाता है, अपना कार्य करता है और पुनः लौट आता है।”

———————————

बृहदारण्यक उपनिषद् से ली गई यह कहानी गुरुमाई चिद्विलासानन्द ने एक सिद्धयोग सत्संग में सुनाई थी। कहानी का यह पुनर्लेखन, पादरी व विद्वान रेमोंदो पणिक्कर जी द्वारा किया गया है।

बृहदारण्यक उपनिषद् : IV, ३, १-६।
[अनुवाद] रेमोंदो पणिक्कर, *The Vedic Experience: Mantramanjari* [लॉस एन्जॅलॅस् : यूनिवर्सिटी ऑफ़ कैलिफ़ोर्निया प्रेस, १९७७] पृ. ३३४: iii।

रेमोंदो पणिक्कर [सन् १९१८-२०१०], स्पेन के एक रोमन कैथलिक पादरी व विद्वान थे। वे परस्पर धार्मिक संवाद के समर्थक थे। अपनी पुस्तक *The Vedic Experience: Mantramanjari* [द वैदिक एक्सपीरियन्स : मन्त्रमन्जरी] में डॉ. पणिक्कर ने वेदों, अरण्यकों और उपनिषदों सहित भारतीय शास्त्रों के कई अंशों का अनुवाद किया है।

सन् १९९६ में, महायात्रा टीचिंग्स् विज़िट के दौरान जब गुरुमाई जी स्पेन में थीं, तब उन्होंने सिद्धयोग ध्यान-शिक्षक, स्वामी शान्तानन्द से कहा कि वे डॉ. पणिक्कर से मिलें। कुछ दिन बाद स्वामी जी

डॉ. पणिक्कर के घर गए और उनसे मिले। वहाँ उन दोनों के बीच डॉ. पणिक्कर के कार्य के विषय में उत्तम चर्चा हुई।

स्वामी शान्तानन्द कहते हैं, “डॉ. पणिक्कर एक प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। वे पूर्वी तथा पश्चिमी दर्शन के समागम में रुचि रखते थे। वे अनेक भाषाओं में सहजता से बोलते व लिखते थे; उन्हें संगीत भी अत्यन्त प्रिय था। उनके ज्ञान की व्यापकता और गहराई ने मुझ पर एक अमिट छाप छोड़ी है।”

© २०२५ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।